अध्याय–चार

कीमतों की घटती व बढ़ती

4.1 थोक भाव के सूचक अंक में उतार-चढ़ाव को देखते हुए यह पता चलता है कि कीमतों में जिस तरह से तेजी आ रही थी उसमें 1974 की अन्तिम तिमाही में कमी हुई जिसकी बड़ी प्रतीक्षा थी। इस सूचक अंक में, जो सितम्बर, 1974 के तीसरे सप्ताह में उच्चतम स्तर पर पहुंच गया था, पांच सप्ताहों की अवधि में तीन प्रतिशत की कमी हुई। नवम्बर में सूचक अंक में कोई परिवर्तन नहीं हुआ और दिसम्बर, 1974 में उक्त सूचक अंक में मामूली कमी हुई। हालांकि खरीफ की फसल असंतोषजनक रही फिर भी इस अवधि में कीमतों में जो कमी हुई है उससे यह संकेत मिलता है कि मूल्यवृद्धिकारी तत्व कुछ कमजोर हुए हैं। चूंकि कीमतें लगभग 5 प्रतिशत से अधिक नहीं गिरीं इसलिए अभी यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि कीमतों की स्थिति में कोई आधारभूत परिवर्तन हो गया है।

4.2 चूंकि कीमतें साल के अन्त तक बढ़ती रहीं, इसलिए 1974 में थोक कीमतों के सूचक अंक में 1973 की 19.2 प्रतिशत की वृद्धि की अपेक्षा 27.3 प्रतिशत की वृद्धि हो जाना आश्चर्य की बात नहीं है। दिसम्बर, 1974 के सूचक अंक की उससे पहले के वर्ष के सूचक अंक से तुलना करने पर स्थिति कुछ अधिक सुधरी हुई लगती है क्योंकि आलोच्य वर्ष की अन्तिम तिमाही में कीमतें गिरी हैं। फिर भी वर्ष के पहले भाग में कीमतें लगातार और काफी अधिक बढ़ी हैं इसलिए कीमतें गिरने से जो राहत अब तक मिली वह तुलनात्मक रूप से नगण्य है।

4.3 दिसम्बर, 1974 में वर्षा होने के बाद रबी की आगामी फसल के लक्षण अच्छे होने से मूल्य-वृद्धि की संभावना और भी कम होगी। फिर भी इस समय केवल इतनी ही आशा की जा सकती है कि अगले महीनों में कीमतें बढ़ने की रफ्तार कम रहेगी। यदि मौजूदा स्थिति बनी रही तो मार्च, 1975 के लिए थोक कीमतों का सूचक अंक मार्च, 1974 के सूचक अंक के स्तर की तुलना में 15 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा जबकि इसमें मार्च, 1973 और मार्च, 1974 में लगभग 29 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। अर्थव्यवस्था में अब भी काफी असंतुलन बना हुआ है और इसलिए यह विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि मूल्य-वृद्धिकारी तत्वों को कारगर ढंग से काबू में कर लिया गया है।

सारणी 4.1

थोक भाव के सूचक अंक

(आधार 1961–62=100)

	भार (प्रतिशत)	पहले के वर्ष की तुलना में प्रतिशत घट-बढ़					
		1971	1972	1973	1974		दिसम्बर73* की तुलना में दिसम्बर '74
सभी वस्तुएं	(100.00)	3.9	7.8	19.2	27.3	(27.2)	21.0
खाद्य वस्तुएं	(41.30)	1.8	11.4	20.9	26.1	(26.0)	22.9
अनाज	(14.78)	0.1	13.3	18.1	35.3	(38.9)	33.9
दालों से भिन्न अनाज	(12.10)	−1.5	10.8	16.6	37.9	(42.7)	35.2
दालें	(2.68)	5.9	22.0	22.9	27.4	(27.4)	30.1
खाद्य तेल	(5.37)	−8.9	2.3	49.2	25.5	(20.8)	18.5
चीनी और संबद्ध उत्पादन	(6.48)	21.5	33.4	6.5	4.8	(6.1)	12.7
शराब और तम्बाकू	(2.50)	2.5	17.3	10.4	18.4	(22.5)	22.8
ईन्धन/ पावर, बिजली और चिकनाने वाली चीजें	(6.10)	5.3	5.5	10.5	52.9	(57.5)	35.5
औद्योगिक कच्चा माल	(12.10)	0.4	−1.2	44.0	19.8	(14.8)	4.1
कपास	(2.44)	22.3	−24.1	40.2	38.2	(34.1)	0.2
कच्चा जूट और मेस्ता	(1.16)	−7.4	8.1	2.2	−7.5	(−0.5)	21.3
तेलहन	(5.24)	−7.1	2.8	57.9	20.5	(13.6)	7.4
रासायनिक पदार्थ	(0.70)	3.3	2.7	5.2	33.8	(38.3)	44.8
मशीनें और परिवहन उपकरण	(7.90)	7.5	6.4	6.2	35.3	(39.7)	44.1
निर्मित वस्तुएं	(29.40)	8.4	6.1	11.4	27.5	(28.2)	17.6
अन्तर्वर्ती वस्तुएं	(5.70)	10.0	8.1	19.0	29.8	(27.6)	4.4
तैयार वस्तुएं	(23.70)	7.9	5.5	9.0	26.7	(28.3)	22.3

वर्ष 1974 के नीचे कोष्ठकों में दिये गये आंकड़े अप्रैल से दिसम्बर, 1973 की तुलना में अप्रैल से दिसम्बर, 1974 के हैं।

* अनन्तिम

थोक भाव

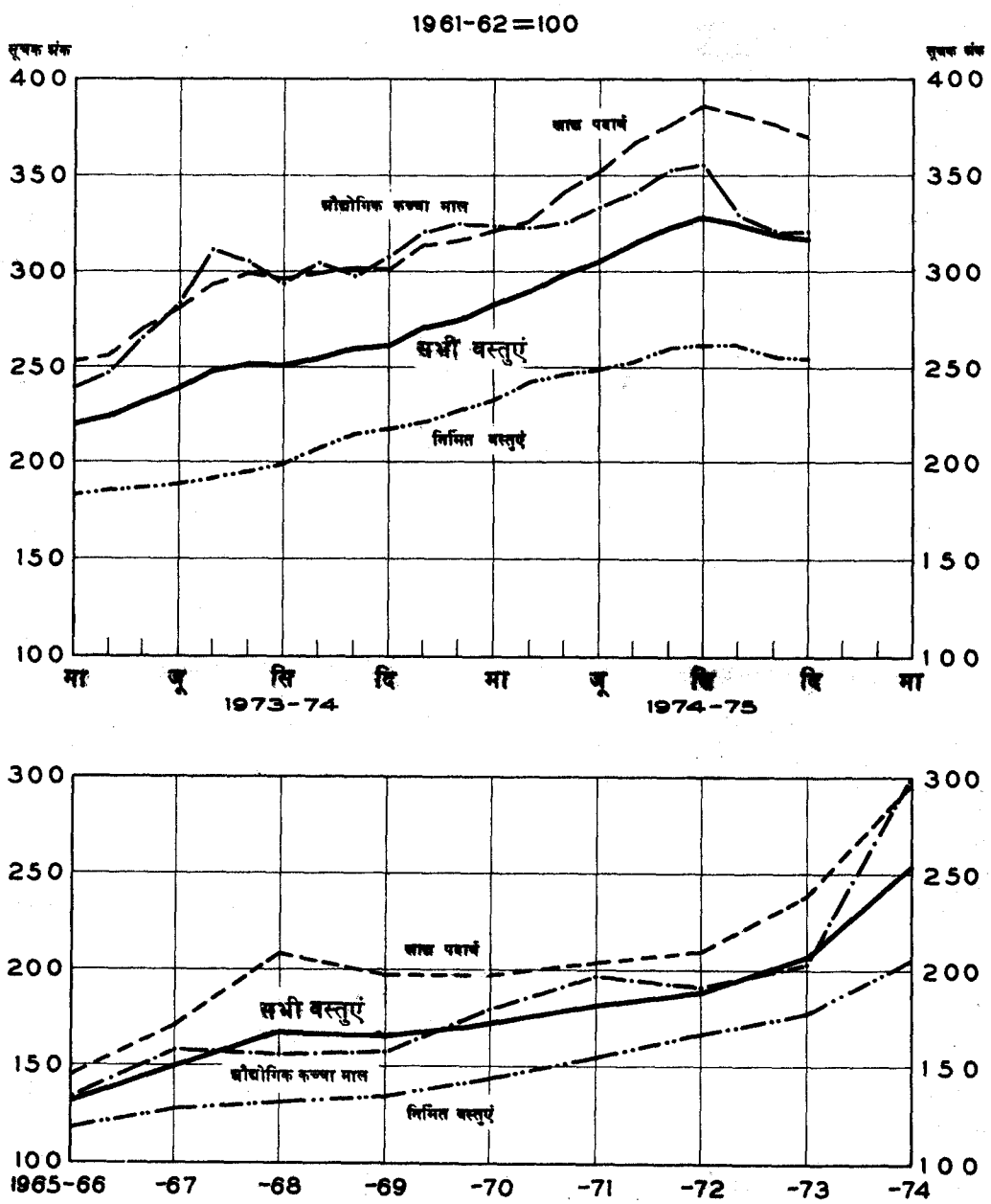

वित्त मंत्रालय, अर्थ प्रभाग

MGIPND-PLW-323/5/Fin/74-75-chart 5

4.4 वर्ष 1974 के पहले 9 महीनों में थोक कीमतों में लगातार होने वाली वृद्धि का खुदरा कीमतों पर भी असर पड़ा। उपभोक्ता कीमतों का सूचक अंक जो सितम्बर, 1973 में 248 था, बढ़कर सितम्बर, 1974 में 334 हो गया किन्तु, अक्टूबर, 1974 के सूचक अंक में केवल एक अंक की ही वृद्धि हुई और वह 335 हो गया। इसका कारण यह था कि थोक कीमतों में सितम्बर के तीसरे सप्ताह के बाद से हुई कमी का असर उपभोक्ता सूचक अंक में सम्मिलित केन्द्रों में से लगभग आधे केन्द्रों पर ही पड़ा। नवम्बर, 1974 में उपभोक्ता सूचक अंक में 4 अंकों की कमी हुई अर्थात् यह घटकर 331 रह गया। कुल मिलाकर नवम्बर, 1973 और नवम्बर, 1974 के बीच सूचक अंक में 27.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो पिछले वर्ष 23.3 प्रतिशत हुई थी।

4.5 दोनों वर्षों अर्थात् 1972 और 1973 में कीमतों के सामान्य स्तर में वृद्धि अधिकतर खाद्य वस्तुओं की वजह से हुई थी। इसके अतिरिक्त, 1973 में कच्चे माल के बारे में भी काफी तेजी आयी थी। किन्तु 1974 में निर्मित वस्तुओं की वैसी ही स्थिति थी जैसी कि इससे पहले वर्ष कच्चे माल की थी। खाद्य सामग्री और निर्मित वस्तुओं, दोनों के सम्मिलित प्रभाव से थोक कीमतों के सूचक अंक में लगभग 70 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वर्ष 1973 में कच्चे माल की कीमतों में तेजी से वृद्धि होने के बाद, निर्मित वस्तुओं के क्षेत्र में, कुछ समय बाद ही सही, वैसी ही तेजी आना स्वाभाविक था। वास्तव में यह तेजी 1973 की बाद की छमाही में ही दिखायी देने लग गयी थी। वर्ष 1974 में जो वृद्धि हुई वह न केवल बाजार की गतिविधियों के कारण हुई बल्कि कुछ हद तक सरकार द्वारा नियंत्रित कीमतों के संबंध में की गयी कार्रवाई के कारण हुई।

4.6 आखिरी कालम को छोड़कर सारणी 4.1 पर एक नजर डालने से सारी स्थिति स्पष्ट हो जायगी। वर्ष 1974 में ईन्धन, बिजली आदि के वर्ग में 52.9 प्रतिशत की वृद्धि साफ तौर पर प्रदर्शित करती है कि यह वृद्धि स्पष्टतः आलोच्य वर्ष में पेट्रोलियम की अंतर्राष्ट्रीय कीमतें बढ़ जाने के कारण हुई। इसके अलावा रासायनिक पदार्थों, मशीनों और परिवहन उपकरणों एवं निर्मित वस्तुओं की कीमतों में खाद्य वस्तुओं की कीमतों की अपेक्षा अधिक वृद्धि हुई। शराब और तम्बाकू की कीमतों में 18.4 प्रतिशत की मामूली वृद्धि हुई। औद्योगिक कच्चे माल की कीमतों में 1974 में उससे पहले वर्ष की अपेक्षा कम तेजी से वृद्धि हुई जिसका कारण यह था कि वर्ष की आखिरी तिमाही में कच्चे जूट और मेस्ता की औसत कीमतें अपेक्षाकृत कम रहीं थीं और साथ ही सभी प्रकार के महत्वपूर्ण कच्चे माल की कीमतें भी कम थी।

4.7 परिस्थितियों के बदलते रहने से उत्पन्न समस्या को सुलझाने का दूसरा तरीका यह है कि साल में कीमतों के बढ़ने और घटने को ध्यान में रखा जाय। सारणी 4.1 के अन्तिम कालम में कीमतों का अन्तर संक्षेप में दिखाया गया है। यह दिलचस्प बात है कि दो वस्तु समूहों अर्थात् रासायनिक पदार्थों और मशीनों तथा परिवहन उपकरणों के सूचक अंकों से पता चलता है कि वर्ष भर इन वस्तुओं की कीमतों में लगातार वृद्धि हुई। निर्मित वस्तुओं के वर्ग की कीमतों में भी सितम्बर' तक यही स्थिति बनी रही, लेकिन बाद में इनकी कीमतें गिरने लगीं और जून, 1974 के बाद रेशमी और रेयन कपड़े की कीमतों तथा अक्टूबर के बाद सूती कपड़े की कीमतों में कमी हुई। इसी प्रकार अन्तर्वर्ती वस्तुओं अर्थात रेयन और सूती धागे की कीमतों में कमी हुई। यह कमी सूती धागे के मामले में जुलाई व अगस्त से बहुत तेजी से हुई। दूसरी महत्वपूर्ण अन्तर्वर्ती वस्तुओं अर्थात् धातुओं के मूल्य में अगस्त, 1974 के बाद यह कमी कुछ हद तक अन्तर्राष्ट्रीय कारणों से हुई जिससे सभी अन्तर्वर्ती वस्तुओं के उप-वर्ग में सितम्बर से लेकर कमी हुई। निर्मित वस्तुओं के दूसरे उपवर्ग अर्थात् तैयार माल की कीमतों में दो महीने बाद कमी होने लगी।

4.8 शराब और तम्बाकू के वर्ग में आने वाली चीजों की कीमतों में जुलाई से सितम्बर तक की तिमाही के दौरान थोड़ी सी अवधि के लिए स्थिरता बनी रही जिसके बाद कीमतों में फिर वृद्धि होने लग गयी। ईंधन और पावर के वर्ग में आने वाली वस्तुओं में पैट्रोलियम से बनी चीजों की कीमतें मार्च में तेजी से बढ़ीं जिसके बाद अप्रैल, 1974 से कोयले की कीमतों में वृद्धि की गयी। तब से लेकर वस्तु समूह के सूचक अंक में केवल थोड़ी सी वृद्धि हुई जिसका प्रमुख कारण भाड़े की ऊंची दरें थीं।

4.9 उपर्युक्त चर्चा से स्पष्ट हो जाता है कि औद्योगिक कच्चे माल वाले वर्ग की चीजों के सूचक अंक में दिसम्बर, 1973 और सितम्बर 1974 के बीच पर्याप्त वृद्धि हुई उसके बाद स्थिति बदल गई और अक्टूबर और नवम्बर में कपास की कीमतें धड़ाधड़ गिरने लगीं। कच्चे जूट और मेस्ता की कीमतें भी गिरीं, लेकिन यह कमी बाद में हुई जबकि उससे पहले के दो महीनों में बाढ़ के कारण फसल को नुकसान होने से कीमतें काफी अधिक बढ़ गयी थीं। तेलहन की कीमतें, इस खबर के बावजूद कि मूंगफली की खरीफ की फसल बहुत सन्तोषजनक नहीं होगी, सितम्बर से गिर गयीं। लगता है कि जुलाई, 1974 से बगैर कमायी खालों की कीमतें स्थिर हो गयीं लेकिन बगैर कमाये चमड़े की कीमतें नवम्बर में गिर गयीं।

4.10 खाद्य वस्तुओं के मुख्य वर्ग की चीजों की कीमतें भी सितम्बर, 1974 के बाद गिरती दिखायी दीं। खाद्यान्नों की कीमतों में अक्टूबर से गिरावट आयी लेकिन खाद्य तेलों की कीमतों में कमी के लक्षण सितम्बर से दिखायी दिये। इसका यह अर्थ नहीं है कि सभी खाद्यान्नों और सभी तेलों की कीमतों में भी कमी हुई। इसी तरह बाजरे की कीमतें काफी अधिक बढ़ीं, जबकि दालों की कीमतों में अरहर की दाल की कीमत बढ़ने के कारण कुल मिलाकर कुछ वृद्धि हुई। खाद्य तेलों में से नारियल के तेल की कीमतें नवम्बर में बढ़ीं लेकिन उसके बाद उसकी कीमतें कम होने लगीं।

4.11 खाद्य वस्तुओं विशेषकर खाद्यान्नों के संबंध में लगातार हो रही वृद्धि के संबंध में कुछ स्पष्टीकरण कर देना आवश्यक प्रतीत होता है। इन वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि सितम्बर, 1974 तक होती रही, हांलाकि 1973-74 में खाद्यान्नों की उपज में काफी वृद्धि हुई थी। खाद्यान्नों की उपज जो 1972-73 में 970 लाख मेट्रिक टन थी, 1973-74 में बढ़कर 1036 लाख टन हो गयी। काफी वृद्धि होने के बावजूद यह उपज 1970-71 के 1084 लाख मेट्रिक टन के स्तर से काफी कम थी। इसका कारण यह था कि दिसम्बर, 1973 और दुबारा फरवरी, 1974 की शीत लहर से रबी की फसल को काफी नुक्सान हुआ। इससे गेहूं की उपज में दूसरे वर्ष भी कमी हुई, और यह 1971-72 की 264 लाख मेट्रिक टन से घट कर 221 लाख मेट्रिक टन रह गयी। खरीफ की फसल अच्छी होने से जिस लाभ की आशा थी वह इस अप्रत्याशित घटना से जो अत्यधिक मुद्रास्फीतिकारी परिस्थिति के सन्दर्भ में हुई, घट गयी।

4.12 गेहूं की सरकारी खरीद और उसे बेचने की कीमतों में अप्रैल, 1974 में हुई वृद्धि व लगातार दूसरे वर्ष में सरकारी खरीद की प्रणाली में दुबारा तबदीली किये जाने से कीमतें बढ़ने में और बल मिला। गेहूं के थोक व्यापार को अपने हाथ में लेने का फैसला अप्रैल, 1973 में किया गया था और यह आशा थी कि कम से कम 80 लाख मैट्रिक टन गेहूं खरीद लिया जायगा। गेहूं की वास्तविक खरीद 1972-73 में की गयी खरीद से भी कम होने के कारण इस नीति में अप्रैल 1974 में पुनः परिवर्तन किया गया और व्यापारियों को इस शर्त पर गेहूं का व्यापार करने की अनुमति दे दी गयी कि वे जितना गेहूं खरीदेंगे उसमें से आधा हिस्सा खरीद की नयी कीमत अर्थात 105 रुपये प्रति क्विंटल के हिसाब से सरकार को देंगे। फिर भी किसानों द्वारा गेहूं दबा लिये जाने तथा स्वार्थी लोगों द्वारा गांवों में ही स्टाक हथिया लेने की कोशिश किये जाने के कारण मण्डियों में गेहूं का आना रुक गया जिसका परिणाम यह हुआ कि खुले बाजार में गेहूं की कीमतें तेजी से बढ़ गयीं और साथ ही गेहूं की बिक्री की कीमत बढ़ा दी गयी ताकि सरकारी खरीद से किसानों को ज्यादा कीमतें दी जा सकें। इसके अलावा सरकार को अधिक मात्रा में गेहूं नहीं मिल सका।

4.13 इस प्रकार सरकारी वितरण प्रणाली में ठीक ऐसे समय कमी आ गयी जब इसमें तेजी लाने और इसका विस्तार करने की बहुत जरूरत थी। गेहूं की सरकारी खरीद और उसकी कीमतों में उपर्युक्त घटनाएं होने और मुद्रा पूर्ति में वृद्धि होने के कारण मई से अगस्त 1974 तक की अवधि में कीमतों में वृद्धि सामान्य से अधिक हुई। इस तरह उपभोक्ताओं के पास उपलब्ध क्रय शक्ति को कम करने के लिए सीधी कार्रवाई करना जरूरी हो गया और इसी कारण जुलाई 1974 में मुद्रास्फीति को रोकने के लिए उपाय किये गये। अत्यावश्यक वस्तु अधिनियम और आन्तरिक सुरक्षा कानून के अंतर्गत जमाखोरों और तस्करों के विरुद्ध की गई कार्रवाई से कम से कम इस भावना पर आधारित मनोवृत्ति को एक झटका लगा कि कीमतें बढ़ती चली जायेंगी। इस क्षेत्र में और अधिक सफलता मिलना केवल वित्तीय और मुद्रा संबंधी विभिन्न प्रतिबंधों के ऊपर ही निर्भर नहीं है परन्तु इस बात पर है कि अत्यावश्यक उपभोक्ता वस्तुएं कितनी मात्रा में उपलब्ध होती हैं।

सरकारी वितरण प्रणाली

4.14 नवम्बर, 1973 से अक्टूबर, 1974 के खरीद-बिक्री के वर्ष में केवल 62.2 लाख मैट्रिक टन अनाज खरीदा जा सका जबकि 1972-73 (नवम्बर-अक्टूबर) में 75.6 लाख मैट्रिक टन खरीदा गया था। खरीफ की फसल से 42.7 लाख मैट्रिक टन की सरकारी खरीद हुई अर्थात् 1972-73 में की गयी खरीद से 12.6 लाख मैट्रिक टन अधिक की गयी। लेकिन रबी की फसल से की गयी खरीद बहुत ही कम अर्थात् 19.1 लाख मैट्रिक टन रही। सरकारी खरीद में कमी होने के बावजूद देश में सरकारी वितरण प्रणाली को उचित स्तर पर जारी रखा गया। अनाज का अधिक से अधिक वितरण करने में विदेशों से अनाज का आयात करने से सहायता मिली। देश में कुल 1078 लाख मैट्रिक टन अनाज उपलब्ध था जो पिछले वर्ष से अधिक था। फिर भी वर्ष 1971-72 की तुलना में इस वर्ष स्थिति सुधरी हुई नहीं थी, हालांकि तब से जनसंख्या में लगभग 5 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इसलिए खाद्यान्न के संबंध में कीमतों का बढ़ने से न रुकना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। अप्रैल, 1974 के बाद गेहूं की कीमतों में हुई तेज वृद्धि, जो थोक कीमतों के सूचक अंक से प्रकट होती है, कुछ सीमा तक आंकड़ों तक ही सीमित है। अप्रैल, 1973 में गेहूं के थोक व्यापार को हाथ में लेने के बाद गेहूं को आगे बेचने की सरकारी कीमत ही थोक कीमतों के रूप में दर्ज की जा रही थी। अप्रैल, 1974 में थोक व्यापार को हाथ में लेने की नीति को अमल में लाना छोड़ देने के साथ खुले बाजार की कीमतों और बिक्री की सरकारी कीमतों को मिलाने की पुरानी प्रणाली फिर से शुरू कर दी गयी। परिणामतः जहां 1973 में बढ़ी हुई कीमतों को कुछ घटा कर दिखाया गया वहां गेहूं की थोक कीमतों में अप्रैल 1974 से लेकर हुई वृद्धि के सरकारी आंकड़ों को उतनी सीमा तक बढ़ा कर दिखाया गया है।

सारणी 4.2
अनाज का मिल सकना

(लाख मैट्रिक टनों में)

	नवम्बर से अक्टूबर		
	1973-74	1972-73	1971-72
1. देश की उपज से .	1036	970	1052
2. सरकारी खरीद से .	62	76	83
3. सरकारी स्टाक से बेचा गया खाद्यान्न .	104	117	101
4. कुल (1—2+3) .	1078	1011	1070

4.15 सरकारी वितरण प्रणाली में चीनी का वितरण भी शामिल है। हालांकि चीनी उत्पादन का दो तिहाई भाग उपभोक्ताओं को सीधे ही दिया जाता है फिर भी देश में खपत के लिए दी गयी चीनी की कुल मात्रा का बिना लेवी की चीनी के बाजार भाव पर खास असर पड़ा है। वर्ष 1973-74 (अक्टूबर से सितम्बर) में उत्पादन शुरू होने के दिनों में पहले स्टाक में चीनी 86 लाख टन थी जबकि पहली अक्टूबर 1972 को स्टाक में 6 लाख मैट्रिक टन चीनी थी। इस अवधि में 1972-73 की अपेक्षा उत्पादन भी कुछ अधिक हुआ पर देश में खपत के लिए दी जाने वाली मात्रा में वृद्धि नहीं की जा सकी क्योंकि काफी मात्रा में निर्यात के लिए चीनी रखना जरूरी था जिससे कि देश में भुगतान-शेष की स्थिति को सुधारा जा सके। थोड़ी सी सरकारी सहायता से या इसके बगैर किये जाने वाले निर्यात के लिए 1973-74 के दौरान 40.5 लाख मैट्रिक टन चीनी का निर्यात किया गया जो पहले की उत्पादन अवधि की मात्रा से चार गुना अधिक था किन्तु बहुत बड़े पैमाने पर चीनी के निर्यात किये जाने की संभावना से अगस्त और सितम्बर, 1974 के बीच खुले बाजार में चीनी की कीमतें 150 रुपये प्रति क्विंटल तक बढ़ गयी। चीनी की कीमतें बढ़ने से गुड़ और खण्डसारी की कीमतें भी बढ़ गयीं और इस वर्ग की वस्तुओं की थोक कीमतों का सूचक अंक असाधारण रूप में बढ़ गया। फिर भी अक्टूबर, 1974 के बाद कीमतें गिरने लगीं।

4.16 लगभग पिछले एक साल से वनास्पती की कमी के कारण इस का वितरण भी उचित दर की दुकानों की मार्फत किया गया है। हालांकि खास तौर से मूंगफली की और आम तौर से तेलहन की फसलें

1972-73 के सूखे से बुरी तरह खराब हो गयी थीं फिर भी लगता है कि वनास्पती उद्योग पर इनका बहुत बुरा असर 1973-74 में ही पड़ा। वर्ष 1973-74 में वनास्पती का उत्पादन इसके पिछले वर्ष की अपेक्षा 10 प्रतिशत कम रहा। इसलिए वनास्पती मिल सकने में, जिसकी मांग पहले ही कठिनाई से पूरी होती थी, कुछ अधिक कठिनाई हुई। विदेशों से मंगाये जाने वाले अपेक्षाकृत सस्ते तेलों की सप्लाई घटा दिये जाने से उद्योगकर्ताओं को वनास्पती के उत्पादन में कमी करनी पड़ी और वनास्पती के नियंत्रित मूल्यों में वृद्धि की इजाजत देने के बावजूद भी इसके उत्पादन पर अभीष्ट प्रभाव नहीं पड़ा। फरवरी, 1974 में कीमतें बढ़ाने से उत्पादन में उससे पहले के महीने के मुकाबले में सुधार हुआ परन्तु यह स्थिति केवल अप्रैल तक ही बनी रही। मई में उत्पादन बहुत कम हो गया और जून में आधा रह गया यद्यपि उस महीने में दुबारा कीमतें बढ़ाने की अनुमति दी गयी थी। जुलाई और उसके बाद के महीनों में फिर कुछ सुधार देखा गया था परन्तु इसका उत्पादन नवम्बर, 1974 तक सामान्य स्तर से कम ही रहा। जनवरी, 1975 में वनास्पती की कीमतों पर से नियंत्रण हटा लिये जाने से आशा है कि इसके उत्पादन में वृद्धि होगी।

4.17 सरकारी वितरण प्रणाली मिट्टी के तेल और सस्ते किस्म के सूती कपड़ों जैसी मदों पर लागू है चाहे यह औपचारिक तरीके से हो अथवा अनौपचारिक तरीके से मिट्टी के तेल के संबंध में आम तौर पर वितरण प्रणाली ठीक रही है। इसमें संदेह नहीं है कि समय समय पर राज्यों के कोटे में कमी करनी पड़ी किन्तु इसमें भारी कमी आने से पहले ही उनका कोटा फिर से पूरा किया गया। कण्ट्रोल के कपड़े की संशोधित योजना के अंतर्गत, कपड़ा उद्योग को प्रतिवर्ष 8000 लाख वर्ग मीटर कपड़ा बनाना पड़ता है। फिर भी, कंट्रोल के कपड़े के संबंध में उक्त प्रणाली के खिलाफ ऐसी शिकायतें मिली हैं कि यह कपड़ा उन लोगों तक नहीं पहुंचता जिनको यह मिलना चाहिए या यह कपड़ा उन कीमतों पर मिलता है जिनसे इस योजना का प्रभाव कम हो जाता है। सौभाग्यवश, देश भर की मिलों में इस समय जितना सूती कपड़ा बनाया जाता है उसका लगभग 20 प्रतिशत कपड़ा अब राष्ट्रीय वस्त्र निगम, जो एक सरकारी उद्योग है, बनाता है। इसलिए व्यापक राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार कपड़े के उत्पादन, कीमतों और वितरण को विनियमित करने के लिए सरकार के हाथ में यह एक और शक्तिशाली साधन है।

4.18 तेजी से बढ़ती हुई कीमतों के दौर में, वितरण की समस्या का महत्व अनिवार्य रूप से बहुत बढ़ गया है। मार्च, 1973 में योजना आयोग ने उचित मूल्यों पर अत्यावश्यक वस्तुएं और आम खपत की वस्तुएं मुहैया करने की समस्या पर विचार करने के लिए एक समिति बनायी थी। यद्यपि समिति की पूरी रिपोर्ट पर अभी तक कोई फैसला नहीं किया गया है फिर भी समिति के सुझावों को अपनाना शुरू हो गया है। इस प्रकार, दो बड़े उत्पादनकर्ताओं द्वारा नहाने का साबुन 'जनता' बाजार में लाया गया। यह सही है कि सरकारी वितरण प्रणाली तभी कारगर हो सकती है जब उत्पादन और सरकारी खरीद दोनों पर पूरा-पूरा नियंत्रण रखा जाय लेकिन यह कोई आसान काम नहीं है। औद्योगिक विकास मंत्रालय के अधीन नागर पूर्ति विभाग की स्थापना करके सरकारी वितरण प्रणाली को और अधिक कारगर बनाने के लिए भूमिका तैयार कर ली गयी है। यह विभाग पहले के नागर पूर्ति संगठन के स्थान पर बनाया गया है जिसका काम 20 अत्यावश्यक वस्तुओं की स्थानीय सप्लाई की स्थिति पर निगरानी रखना था। इस संगठन का मुख्य काम राज्य सरकारों के बीच सम्पर्क बनाये रखना था और उत्पादन करने, यहां तक कि वितरण की मात्रा निर्धारित करने के सम्बन्ध में भी इसके पास कोई अधिकार नहीं थे। इसलिए यह संगठन वह भूमिका नहीं अदा कर सका जिसकी कि इससे उम्मीद थी। आशा है कि नया नागर पूर्ति विभाग इस कमी को पूरा करेगा। हमारी अर्थ-व्यवस्था के ढांचे में जिस प्रकार की सीमाएं हैं उन्हें ध्यान में रखते हुए वास्तविक रूप में किसी ऐसी प्रभावकारी सरकारी वितरण प्रणाली के चालू करने में काफी समय लगेगा जिसमें आम खपत में आने वाली बहुत सी वस्तुएं शामिल हों। थोड़े अरसे के लिए अधिक यथार्थवादी युक्ति तो यही होगी कि कुछ बुनियादी चीजों जैसे अनाज, चीनी, मिट्टी के तेल, वनास्पती और कन्ट्रोल के कपड़े पर ही ध्यान दिया जाय। इन सभी वस्तुओं के मामले में सरकारी वितरण की मौजूदा प्रणाली को सुधारने की काफी गुंजाइश है।

मूल्य नीति

4.19 जैसा कि पहले बताया जा चुका है, अप्रैल, 1974 में गेहूं की सरकारी खरीद करने की नीति में एक बहुत बड़ा परिवर्तन किया गया। अप्रैल, 1973 में थोक व्यापार के लिए लागू की गयी सरकार के एकाधिकार की नीति वर्ष 1974-75 की रबी के दिनों में खरीद-बिक्री के लिए निर्धारित नीति के अनुसार छोड़ दी गयी और सरकारी एजेंसियों के साथ साथ निजी व्यापारियों और सहकारी समितियों को भी लाइसेंसिंग तथा नियंत्रण प्रणाली के अन्तर्गत क्रय-विक्रय की अनुमति दी गयी। निजी थोक व्यापारियों और सहकारी समितियों को गेहूं अधिक पैदा करने वाले राज्यों जैसे हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान से गेहूं खरीदने की अनुमति दी गयी। उनके द्वारा खरीदे गये गेहूं का 50 प्रतिशत भाग 105 रुपये प्रति क्विन्टल के निर्धारित मूल्य पर लेवी के रूप में सरकार को देने के बाद उन्हें बाकी गेहूं सम्बन्धित राज्य के अन्दर तथा निर्यात-पत्र (एक्सपोर्ट परमिट) के आधार पर राज्य के बाहर बेचने के अधिकार दिये गये। 105 रुपये प्रति क्विन्टल की यह कीमत वही थी जो सरकार द्वारा 1974-75 के खरीद और बिक्री के दिनों के लिए निर्धारित की गयी थी और जो कृषि मूल्य आयोग द्वारा सुझायी गयी 90 से 100 रुपये प्रति क्विन्टल कीमत के मुकाबले काफी ऊंची थी। सरकारी खरीद की इस नयी कीमत में 1973 की पहले की खरीद की कीमत अर्थात् 76 रु० प्रति क्विन्टल की अपेक्षा 38 प्रतिशत की वृद्धि हुई। बजट साधनों पर सरकारी खरीद की ऊंची कीमतों से पड़ने वाले प्रभाव को कम करने के उद्देश्य से सरकारी गोदामों से बेची जाने वाली गेहूं की कीमत, नवम्बर, 1973 में 78 रुपये प्रति क्विन्टल से बढ़ा कर 90 रुपये प्रति क्विन्टल कर दी गयी थी। अप्रैल 1974 के मध्य से और वृद्धि कर के इसे 125 रुपये प्रति क्विन्टल कर दिया गया।

4.20 जब व्यापारियों पर 50 प्रतिशत लेवी लगाने की प्रणाली लागू की गयी थी तब यह आशा थी कि सरकार को लगभग 50 लाख मैट्रिक टन गेहूं सरकारी तौर पर वितरण के लिए मिल जायगा। यह आशा पूरी नहीं हुई और सरकार को अप्रैल से अक्टूबर 1974 के दौरान खरीदने पर केवल 18.44 लाख मेट्रिक टन गेहूं मिल सका जबकि वर्ष 1973 की उसी अवधि में 45.29 लाख मेट्रिक टन गेहूं की सरकारी खरीद हुई थी। इसके लिए वर्ष 1973-74 में गेहूं की उपज में 26.7 लाख टन की कमी का होना कुछ कारण हो सकता है लेकिन यह पर्याप्त कारण नहीं है। ऐसा लगता है कि किसानों और व्यापारियों ने मण्डियों में गेहूं लाने में हेराफेरी की जिससे वह लेवी देने से बच सकें।

4.21 गेहूं की सरकारी खरीद की कीमतों के सम्बन्ध में जो अनुभव हुआ उसका 1974-75 की खरीफ की फसल की सरकारी खरीद की नीति पर काफी अधिक प्रभाव पड़ा। वर्ष 1973 में कृषि मूल्य आयोग ने धान के लिए सरकारी खरीद की कीमत 63 रुपये प्रति क्विन्टल रखने का सुझाव दिया था जो 1972 के खरीद-बिक्री के दिनों की 54 रुपये की औसत कीमत से 9 रुपये अधिक था। लेकिन सरकार ने सरकारी खरीद की कीमत 70 रुपये तय की। 1974 में कृषि मूल्य आयोग ने मोटे किस्म के धान के लिए सरकारी खरीद की कीमत 74 रुपये प्रति क्विन्टल रखने का सुझाव दिया था। विभिन्न स्रोतों से दबाव पड़ने के बावजूद सरकार ने कृषि मूल्य आयोग का सुझाव मान लिया। अब इस बात का काफी प्रमाण मिल गया है कि यह जरूरी नहीं है कि खरीद की ऊंची कीमतों से अनाज ज्यादा मिलने की गारण्टी हो जाय बल्कि इनसे और ज्यादा कीमत बढ़ने की संभावनाओं को बल मिलता है। फिर भी पिछले दो वर्षों की असाधारण परिस्थितियों को देखते हुए किसानों को अच्छी कीमतें देने का महत्व किसी तरह कम नहीं होता क्योंकि ऐसी अवस्था में वे अधिक उत्पादन कर सकेंगे।

4.22 वर्ष 1974-75 में खरीफ की खरीद और बिक्री के दिनों में सरकारी खरीद का काम धीमी गति से शुरू हुआ। कुछ हद तक इसका कारण खरीद व बिक्री के चालू दिनों के लिए राज्य सरकारों द्वारा अपनी सरकारी खरीद की योजनाओं को तय करने में देरी करना था। वर्ष 1973 में केवल दो राज्यों अर्थात् असम और उड़ीसा ने धान/चावल की खरीद अपने हाथ में ले ली। अब इन दोनों राज्यों ने, जिसमें से असम ने क्रम के आधार पर और उड़ीसा ने 75 प्रतिशत के आधार पर धान की मिलों के मालिकों पर लेवी लगाने की इच्छा व्यक्त की है। मिल के मालिकों व व्यापारियों और थोक व्यापारियों पर जो लेवी आंध्र प्रदेश, बिहार, हरियाणा, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, पंजाब, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल राज्यों में लगायी गयी थी वह जारी रही। कर्नाटक ने मिल मालिकों पर लगायी गयी लेवी को वापस ले लिया है और हरियाणा, मध्य प्रदेश और पश्चिम बंगाल में लेवी की दरों में कमी कर दी गयी है। उत्तर प्रदेश ने लेवी के प्रतिशत में वृद्धि कर दी है। पर बिहार और उड़ीसा राज्यों ने प्रतिशत लेवी के बदले पूर्ण लेवी लागू कर दी है। आंध्र प्रदेश और पंजाब ने अपनी खरीद की प्रणाली में 1973-74 की तुलना में कोई परिवर्तन नहीं किया है। मिल मालिकों व व्यापारियों पर लगायी गयी लेवी में छूट देने की अपेक्षा उत्पादकों पर लगायी गयी लेवी में छूट देने की बात का इस वर्ष स्वागत किया गया लगता है। मध्य प्रदेश, उड़ीसा, तमिलनाडु और राजस्थान ने यह तरीका अपना लिया है जबकि आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल ने लेवी के प्रतिशत को बढ़ा दिया है। दूसरी ओर बिहार, गुजरात और कर्नाटक ने लेवी की दरों में कमी कर दी है।

4.23 सौभाग्य से सरकारी खरीद के काम में, जो पहले धीमी गति से शुरू हुआ था, अब तेजी आ गयी है और पंजाब जैसे राज्यों में मण्डियों में अनाज अब ज्यादा आने लगा है। अक्टूबर से दिसम्बर, 1974 के दौरान पंजाब में 5.23 लाख मेट्रिक टन चावल की सरकारी खरीद हुई जबकि अक्टूबर से दिसम्बर, 1973 में 6.21 लाख मेट्रिक टन चावल की सरकारी खरीद की गयी थी। देश भर में खरीफ की फसल की बिक्री-खरीद के चालू दिनों में दिसम्बर 1974 तक कुल 14.4 लाख मेट्रिक टन अनाज की सरकारी खरीद हुई जबकि 1973 की उसी अवधि में 19.3 लाख मेट्रिक टन अनाज की सरकारी खरीद हुई थी। इस बात को देखते हुए कि 1974 में खरीफ की फसल में अनाज की उपज 1973 की अपेक्षा काफी कम हुई. उपर्युक्त सरकारी खरीद की प्रगति असंतोषजनक नहीं है।

4.24 गन्ने से 8.5 प्रतिशत चीनी की प्राप्ति के लिए 1974-75 में गन्ने की खरीद के दिनों के लिए न्यूनतम कीमत 8.50 रुपये प्रति क्विन्टल रखी गयी जबकि इससे पहले के दो मौसमों में यह कीमत 8.00 रुपये प्रति क्विन्टल रखी गयी थी। चीनी अगर पूरे अनुपात में निकाली जाय तो खर्च प्रति 0.1 प्रतिशत अधिक चीनी निकालने पर 10 पैसा बैठता है। चूंकि बहुत से राज्यों में गन्ना उगाने वालों द्वारा प्राप्त की गयी कीमतें उन कीमतों से अधिक हैं जो कानूनी तौर पर गन्ने के लिए न्यूनतम रुप में निर्धारित की गयी थीं, इसलिए इस प्रणाली से विभिन्न राज्यों में क्या असर पड़ेगा यह कहना अनिश्चित है।

4.25 जैसा कि पहले कहा जा चुका है, बनास्पती के उत्पादकों को साल में दो बार, एक बार फरवरी में और फिर जून 1974 में, कीमतें बढ़ाने की अनुमति दी गयी थी। दूसरी बार जो कीमत बढ़ायी गयी वह 1800 से 2200 रुपया प्रति मैट्रिक टन के बीच थी, क्योंकि उस समय सरकार सहायता को जारी रखने की स्थिति में नहीं थी जो आयात किये जाने वाले सस्ते तेलों के रूप में अप्रत्यक्ष रूप में दी जाती थी। ऐसी स्थिति में जब विदेश से मंगाये जाने वाले सस्ते तेल उपलब्ध नहीं हों और वनास्पती तेलहनों की देसी कीमतों पर कोई नियंत्रण नहीं रखा जा सकता हो तब नियंत्रित मूल्य निर्धारित करने के पुराने फार्मूले के अनुसार न तो उत्पादन में नियमित वृद्धि की सुनिश्चित व्यवस्था की जा सकती थी और न ही उपभोक्ताओं को वास्तविक सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की जा सकती थी। इसलिए 5 जनवरी, 1975 से वनास्पती की कीमतों पर कानूनी प्रतिबंध उठा लेने का निर्णय किया गया। एक उल्लेखनीय घटना यह है कि नयी व्यवस्था के अन्तर्गत आशा है कि वनास्पती उद्योग द्वारा मूंगफली के तेल का इस्तेमाल न्यूनतम आवश्यकता के अनुसार (फिलहाल 25 प्रतिशत) ही किया जायगा और अधिकतर बिनौले के तेल और धान की भूसी के तेल जैसे पहले से प्रयोग में चले आ रहे तेलों पर अधिक निर्भर रहा जायगा जो तरल रूप में खाये जाने योग्य नहीं होते। इसका मतलब यह होगा कि मूंगफली के तेल जैसे परम्परागत खाद्य तेल बहुत बड़ी मात्रा में तरल रूप में खाने के लिए मिलने लगेंगे।

4.26 सूती कपड़े के बारे में अप्रैल, 1974 में फिर से विचार किया गया और कंट्रोल के कपड़े की कीमतें 30 प्रतिशत बढ़ा दी गयीं थीं। कीमत में यह वृद्धि कपड़े की आम इस्तेमाल में आने वाली किस्मों का उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से की गयी थी जिसका उत्पादन मई, 1968 से लेकर ,जब कपड़े की कीमतें पिछली बार निर्धारित की गयी थी, कपास की कीमतों में काफी वृद्धि हो जाने से लाभकारी नहीं रह गया था। इसी के साथ कंट्रोल का कपड़ा बनाने का कपड़ा उद्योग का दायित्व, जो पहले 4000 लाख वर्ग मीटर था, बढ़ा कर दुगुना अर्थात् 8000 लाख वर्ग मीटर कर दिया गया था। मीडियम 'ए' किस्म के कपड़े का भी कंट्रोल कर दिया गया। दायित्व को न पूरा करने पर लिये जाने वाले जुर्माने की दर को 1/– रुपये से एकदम बढ़ा कर 2.50 रुपये प्रति वर्ग मीटर कर दिया गया, हालांकि दायित्वों की अदला-बदली की अनुमति दी जाती रही और निर्यात किये जाने वाले तैयार माल के लिए छूट दी जाती रही। इन उपायों से अप्रैल से सितम्बर, 1974 के बीच की अवधि में कंट्रोल के कपड़े का उत्पादन 4000 लाख वर्ग मीटर से कुछ ही कम रहा। कंट्रोल के कपड़े के उत्पादन की योजना में पहली अक्टूबर

1974 से थोड़ा सा परिवर्तन किया गया है । इस तारीख से प्रत्येक मिल पर यह जिम्मेवारी सौंपी गयी है कि वह 30 प्रतिशत कंट्रोल का कपड़ा तैयार करे । यदि कोई मिल 5 रुपये के मूल्य का सूती कपड़ा अथवा 7.50 रुपये के मूल्य के सिले हुए कपड़े निर्यात करेगी तो उसे कंट्रोल का कपड़ा बनाने में 1 मीटर की छूट मिल सकती है । इस नयी योजना का उद्देश्य निर्यात को प्रोत्साहन देना है, जो कंट्रोल के कपड़े के कुल कोटे में कमी करके नहीं है । फिर भी यह उद्देश्य दो अलग अलग क्षेत्रों अर्थात् कंट्रोल के कपड़े का पर्याप्त मात्रा में उत्पादन करने एवं निर्यात की वृद्धि करने की गति को बनाये रखने में कहां तक कारगर हुआ है, इसका अनुमान वास्तविक अनुभव के बाद ही लगाया जा सकता है । ऐसा लगता है कि कंट्रोल के कपड़े के वितरण की व्यवस्था में भी सुधार करने की आवश्यकता है जिससे कंट्रोल का कपड़ा समाज के अधिक कमजोर वर्ग तक पहुंच सके । इस संबंध में टेक्सटाइल कमिश्नर द्वारा मार्ग दर्शक सिद्धांत तैयार किये गये हैं और यह उद्देश्य है कि निम्न आय वर्ग के राशनकार्ड वालों को इस योजना से लाभ पहुंचाया जाय और यह योजना 15 से 20 हजार तक की आबादी वाले अर्ध शहरी केन्द्रों में भी लागू की जाय ।

4.27 बुनकरों के हित को देखते हुए सूती धागे की कीमतों का निर्धारण करने और वितरण करने पर 13 मार्च, 1973 से कानूनी नियंत्रण कर दिया गया । इसके उत्पादन में चूंकि बाद में कुछ कुछ सुधार हुआ इसलिए धीरे धीरे कंट्रोल हटा लिया गया और यह नियंत्रण कम काउण्ट के धागे से हटाना शुरू किया गया । 80 काउण्ट के धागे से ऊपर के काउण्ट वाले धागे के संबंध में कीमतों पर 12 फरवरी से और वितरण पर 20 मार्च 1974 से कंट्रोल समाप्त कर दिया गया । इस योजना के स्थान पर स्वैच्छिक नियंत्रण की योजना लागू की गयी है जिसके अन्तर्गत शेष वर्ष के लिए सभी काउण्टों के सूती धागे की कीमतें मिल से बाहर निकलने के समय उसी स्तर पर बनायी रखी जायेंगी जिस स्तर पर वे 28 मार्च 1974 को थीं । इसके अलावा सूचना मिली है कि भारतीय सूती मिल संघ द्वारा वितरण के लिए उपयुक्त प्रबन्ध किया गया है ।

4.28 टैरिफ कमीशन के सुझावों के अनुसार सीमेंट की प्रतिधारण कीमत में अगस्त, 1974 से वृद्धि की गयी । यह वृद्धि 1973 में की गयी 10 रुपये प्रति मेट्रिक टन की अन्तरिम वृद्धि के अलावा की गयी । सरकार ने यह फैसला भी किया है कि यदि परिस्थितिवश आवश्यक हुआ तो इस योजना की अवधि में जो 31 मार्च 1979 तक है, कीमतों में प्रति वर्ष पहली जुलाई से क्रम के अनुसार वृद्धि की अनुमति दी जायगी । टैरिफ कमीशन की रिपोर्ट की यह विशेषता उल्लेखनीय है कि इस रिपोर्ट में उन कारखानों की कठिनाइयों पर प्रकाश डाला गया है जो मौजूदा समय में ऊंची लागत पर पूंजी लगाकर स्थापित किये जा रहे हैं । यद्यपि आयोग ने इस प्रकार के यूनिटों के लिए अधिक प्रतिधारण कीमतों का सुझाव दिया है लेकिन सरकार की ओर से इस बारे में अभी तक कोई फैसला नहीं किया गया है । इस प्रश्न का संबंध सिर्फ सीमेंट से ही नहीं है क्योंकि पूंजीवाले कार्यों की लागत बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण नये कारखानों की उत्पादन-लागत मौजूदा कारखानों की उत्पादन-लागत की अपेक्षा काफी अधिक हो जाती है । यदि नयी यूनिटों को बढ़ावा देना है तो इस समस्या का कारगर समाधान जल्दी ही ढूंढना पड़ेगा । इसलिए, सीमेंट के संबंध में जो फैसला किया जायगा उसका व्यापक प्रभाव होगा ।

4.29 कीमतों पर विचार करते समय कोयले, मूल औषधियों, एल्यूमिनियम और अखबारी कागज जैसी मदों की कीमतों पर भी विचार किया गया । इन सभी मामलों में औद्योगिक लागत और मूल्य ब्यूरो से सलाह ली गयी थी । ये कीमतें अप्रैल-मई 1974 में बढ़ायी गयीं जिससे इन निर्णयों में जिनमें गेहूं और कंट्रोल के कपड़े की कीमतों के बारे में किये गये निर्णय शामिल हैं, परस्पर तालमेल रखा जा सके । कोयले की कीमतों में 10 रुपये प्रति मैट्रिक टन की औसत से वृद्धि की गयी । कोयले की कीमत में वृद्धि करने की आवश्यकता कोयले के उत्पादन की लागत में वृद्धि हो जाने के कारण हुई और उत्पादन की लागत में वृद्धि श्रमिकों के वेतन में वृद्धि का परिणाम थी । इस उद्योग में न्यूनतम वेतन लगभग 50 प्रतिशत बढ़ा दिया गया है । इसके अतिरिक्त कोयला उद्योग के राष्ट्रीयकरण के बाद बहुत सारे दिहाड़ी के मजदूरों को नियमित मजदूर बना दिया गया था और इस कारण भी मजदूरी का खर्च बढ़ गया । एल्यूमिनियम के संबंध में, प्रति मैट्रिक टन पर (इलक्ट्रोलिटिक वर्ग के एल्यूमिनियम की मौजूदा कीमत अर्थात् 3990 रुपये और वाणिज्यिक वर्ग के एल्यूमिनियम की मौजूदा कीमत अर्थात् 3970 रुपये के ऊपर) 1090 रुपये के हिसाब से कीमत बढ़ाने की अनुमति दी गयी क्योंकि औद्योगिक लागत और मूल्य ब्यूरो की राय थी कि उत्पादन में काम आने वाली केल्साइण्ड पेट्रोलियम, कोक, कास्टिक सोडा आदि जैसी वस्तुओं की कीमतें बढ़ गयी हैं और पावर की कमी के कारण क्षमता के उपयोग में भी कमी हुई है । बहुत सी मूल औषधियों की कीमतें भी बढ़ानी पड़ीं खासकर उन औषधियों की जो पेट्रोलियम पर आधारित हैं, क्योंकि कच्चे माल की लागत अधिक हो गयी थी । अधिकतर वस्तुओं की कीमतों में 40 प्रतिशत से कम की वृद्धि की गयी किन्तु कुछ अन्य वस्तुओं की कीमत में 40 प्रतिशत से अधिक वृद्धि की गयी । दूसरी ओर ब्यूरो की जांच के आधार पर कुछ चीजों की कण्ट्रोल की कीमतें घटा दी गयीं । जहां तक अखबारी कागज का संबंध है इसकी कीमत विदेशों से मंगाये जाने वाले अखबारी कागज के बराबर बनाये रखने की नीति के कारण नेपा मिल्स को अदा की गयी कीमत उत्पादन की लागत से काफी कम रही । विदेशों में अखबारी कागज की कीमतें बढ़ जाने के कारण फरवरी, 1974 में कंपनी को कुछ राहत देने के लिए अखबारी कागज की कीमत बढ़ा कर 1800 रुपये प्रति मैट्रिक टन करना उचित समझा गया । इसमें पहली सितम्बर, 1974 से 500 रुपये प्रति मैट्रिक टन की और वृद्धि करने की अनुमति दी गयी ।

4.30 दूसरा उद्योग रबड़ के टायर और ट्यूब का उद्योग है जिसके बारे में औद्योगिक लागत और मूल्य ब्यूरो से सलाह मांगी गयी थी । यद्यपि इस उद्योग की वस्तुओं की कीमतों पर अनौपचारिक नियंत्रण था, फिर भी, 1973 के अंत में ऐसा पता चला है कि इस उद्योग ने ऐसे वर्गों के कुछ टायर और ट्यूबों की, जिनकी सप्लाई बहुत कम थी, कीमतें बढ़ाने का अपने आप ही फैसला कर लिया था । इसलिए नवम्बर, 1973 में सरकार ने इन विशिष्ट किस्मों की वस्तुओं की कीमतों को बढ़ने से रोक दिया । औद्योगिक लागत और मूल्य ब्यूरो ने जिसने इस उद्योग की लागत की जांच की थी, इस बात का पता लगाया कि कच्चे माल की मौजूदा कीमतों के आधार पर नवम्बर, 1973 के मूल्यों में 50 प्रतिशत तक की वृद्धि करना जरूरी हो गया है । मूल्य नियंत्रण की ऐसी प्रणाली बनाये रखने के बजाय कि जिसमें कच्चे माल के मूल्यों में घटबढ़ के कारण बार बार संशोधन करना जरूरी हो, सरकार ने

अप्रैल, 1974 में कानूनी और अनौपचारिक दोनों प्रकार के नियंत्रण हटाने का फैसला किया। नियंत्रण हटा लिये जाने के बाद उत्पादन में वृद्धि हो रही है तथापि मोटर गाड़ियों आदि के टायरों की कमी अब भी बनी हुई है।

4.31 टायरों से कन्ट्रोल हटा लिये जाने के शीघ्र बाद वाणिज्यिक मोटर गाड़ियों पर से अनौपचारिक कण्ट्रोल भी हटा लिया गया। फिर भी, एक सीमा निर्धारित कर दी गयी है जहां तक सरकार को बताये बिना कीमत बढ़ाने की अनुमति होगी। कृषि संबन्धी ट्रैक्टरों के मामले में भी अक्टूबर, 1974 से लेकर यही नीति लागू की गयी थी जब कानूनी नियंत्रण-उठा लिया गया था। यह नियंत्रण इस शर्त पर उठाया गया था कि कीमतें कुछ फारमूलों के अनुसार निश्चित की जायगी और यह फारमूले सरकार निश्चित करेगी। यात्री कारों के संबन्ध में हाल ही में कीमतों पर से कानूनी कण्ट्रोल हटाने का फैसला किया गया है, क्योंकि उच्चतम न्यायालय के फैसले के बाद छह-छह महीनों में कीमतों में फेरबदल करना कठिन होता जा रहा था। मोटर स्पिरिट की कीमतों में काफी अधिक वृद्धि हो जाने के कारण इसकी मांग में भी कुछ कमी हुई है। फिर भी, एक किस्म की कारों के संबन्ध में वितरण नियंत्रण बनाये रखा गया क्योंकि ऐसा महसूस किया गया था कि जिन लोगों ने पहले अपने नाम रजिस्टर करवा रखे हैं उन्हें इतना समय इन्तजार करने के बाद कुछ तरजीह मिलनी चाहिए।

4.32 अधिक उत्पादन को बढावा देने के लिए साबुन पर से अनौपचारिक नियंत्रण व्यवहार में हटा लिया गया, क्योंकि अब सस्ते दामों पर विदेशों से सुअर की चर्बी मंगाना संभव नहीं है जिससे वनास्पती उद्योग में काम आने वाले सोयाबीन और खजूर के तेल की तरह अब तक उत्पादन की लागत कम रखने में सहायता मिलती रही थी। इसी प्रकार उद्योग में किये गये उत्पादन का एक भाग 'जनता' साबुन उत्पादन के लिए रिजर्व रखा गया है जिसकी कीमत 100 ग्राम की टिकिया के लिए लगभग एक रुपया रखी गयी है।

4.33 खाने के काम न आने वाले तेलों का साबुन बनाने में अधिक इस्तेमाल करने को बढ़ावा देने की नीति के परिणाम अच्छे निकले हैं, यही वनास्पती के मामले में भी हुआ, फिर भी देश में तेलों और चर्बी की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है और इसलिए यह चिन्ता का कारण बनी हुई है।

4.34 एल्यूमिनियम को छोड़कर देश में बहुत सी अलौह धातुओं की कीमतें अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों के घटने बढ़ने के अनुसार घटती बढ़ती रहती है। खनिज और धातु व्यापार निगम एकमात्र आयातक की हैसियत से प्रत्येक तिमाही में कीमत निर्धारित करता है। इस क्षेत्र में जनवरी और अप्रेल, 1974 में कीमतों में वृद्धि हुई थी किन्तु तभी अन्तर्राष्ट्रीय मण्डी में परिवर्तन होने शुरु हो गये थे। जुलाई, 1974 में जिन चीजों की कीमतें बढ़ायी गयी थीं उनमें तांबा शामिल नहीं था जबकि सीसे की कीमतें कुछ कम कर दी गयीं। तांबा, जस्ता, सीसा और टिन की कीमतों में अक्टूबर में कुछ और कमी की गयी थी हालांकि तब भी ये कीमतें अक्टूबर, 1973 में निर्धारित की गयी कीमतों की अपेक्षा काफी अधिक थीं। जनवरी, 1975 में जो फेर बदल किया गया है उससे तांबे की कीमत पिछले वर्ष की कीमतों से नीचे आ गयी हैं जबकि जस्ता उसके वास्तविक उपयोगकर्ताओं को अब भी उन्हीं कीमत पर मिल सकता है जिन पर यह उन्हें एक वर्ष पहले मिलता था। सीसे और टिन की कीमतें भी जनवरी से मार्च, 1975 तक की तिमाही के लिए कम कर दी गयी हैं जिससे वे पिछले अप्रैल की कीमतों की अपेक्षा कम रहें। इस प्रकार केवल निकल ही ऐसी धातु है जिसकी कीमतें एक तिमाही से दूसरी तिमाही बढ़ रही हैं।

4.35 अलौह धातुओं के संबंध में जो सुखद अनुभव हुआ है दुर्भाग्यवश वह रासायनिक खाद और पेट्रोलियम पदार्थों के संबन्ध में नहीं हुआ। खनिज तेल की कीमतों में क्रम के अनुसार तेजी से वृद्धि होने से तेल का निर्यात न करने वाले विकासशील देशों के लिए बडा दुखद अनुभव हुआ है। लेकिन विदेश से मंगाये जाने वाली रासायनिक खाद की कीमतों में इतनी वृद्धि हुई है जिसको इसे बनाने के काम आने वाली आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों की वृद्धि के आधार पर उचित नहीं ठहराया जा सकता। मिट्टी के तेल की कीमतों में होने वाली वृद्धि को 27 प्रतिशत तक सीमित रखना जहां संभव हुआ है वहां एक वर्ष पहले की कीमतों की तुलना में डीजल के तेल की मौजूदा कीमतें 100 प्रतिशत और रासायनिक खाद की कीमतें 85 प्रतिशत अधिक हैं। इससे यही आशा की जा सकती है कि भविष्य में यदि किसी प्रकार का फेर बदल करने की जरूरत हुई तो मामूली ही होगी।

4.36 इस वर्ष उपभोक्ताओं के हित की रक्षा करने के उद्देश्य से एक महत्वपूर्ण कदम 1 अगस्त, 1974 को कागज (उत्पादन पर नियंत्रण) आदेश का जारी किया जाना था। वर्ष, 1968 से लेकर जब से कागज पर से कण्ट्रोल हटाया गया था, कागज की कीमतें लगातार बढ़ती चली आ रही थीं। वर्ष, 1974 के पहले सात महीनों में कागज की थोक कीमतों का सूचक अंक लगभग 40 प्रतिशत बढ़ गया था। इसके अतिरिक्त उत्पादन-कर्ता अपने उत्पादनों में इस प्रकार के परिवर्तन करते रहे जिससे वे ऐसी किस्मों के उत्पादन कर सकें कि उन्हें अधिक से अधिक लाभ हो। इस वजह से आम तौर से अधिक इस्तेमाल में आने वाले कागज की सप्लाई बहुत कम हो गयी और इस प्रकार पाठ्य पुस्तकों और कापियों जैसी आवश्यक चीजों के लिए कागज की मांग भी पूरी नहीं हो सकती थी। इसलिए सरकार ने यह आदेश जारी किया कि प्रत्येक मिल कम से कम 30 प्रतिशत छपाई का सफेद कागज तैयार करेगी और यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई उत्पादनकर्ता भारी कागज का उत्पादन करके इस आदेश की अवहेलना न करे, यह स्पष्ट किया गया था कि कागज का वजन प्रति वर्ग मीटर 60 ग्राम से अधिक नहीं होना चाहिए। नियंत्रण आदेश में यह भी व्यवस्था है कि मिल के कुल उत्पादन में से 27 प्रतिशत उत्पादन दूसरी किस्म के कागज का होना चाहिए।

4.37 मूल्य नीति के संबंध में अब तक जो समीक्षा की गयी है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मूल्य और वितरण पर नियंत्रण रखने से जो जटिल समस्याएं पैदा हुई थीं उन्हें सुलझाने के लिए सरकार ने अधिकाधिक मात्रा में नरम दृष्टिकोण अपनाया। स्पष्टतः जब अत्यन्त मूल्यवृद्धिकारी स्थिति हो, कण्ट्रोल की वस्तुओं की कीमतों में एक दम वृद्धि करने से बचना चाहिए। यह बात व्यापक खपत में आने वाली चीजों पर खास तौर से लागू होती है। लेकिन, यदि कण्ट्रोल की वस्तुओं का उत्पादन करने के काम आने वाली वस्तुओं की कीमतों पर नियंत्रण नहीं रखा जा सकता हो तो कीमतों पर कड़ा नियंत्रण रखना उत्पादन बढ़ाने के रास्ते में बाधा बन जाता है और इसकी वजह से और अधिक कमी हो जाती है। ऐसी स्थिति में समय समय पर कण्ट्रोल की कीमतों में फेर बदल करने के सिवा और कोई चारा नहीं होता

जिससे अधिक उत्पादन के लिए उचित प्रोत्साहन दिया जाता रहे । अब इस बात का काफी प्रमाण मिल गया है कि वितरण के लिए कारगर व्यवस्था के बिना कीमतों पर किये जाने वाले नियंत्रण से उपभोक्ताओं को वास्तविक राहत नहीं मिल सकती । ठीक ऐसी ही परिस्थितियों में चोरबाजारी पनपती है और इससे काले धन में बहुत अधिक वृद्धि होती है । ऐसे सभी मामलों में जहां वितरण की कुशल प्रणाली नहीं ढूंढ निकाली जाती, वहां कीमतों पर नियंत्रण रखने का समाज के लिए उपयोगी होना अत्यन्त सन्देहास्पद है । इसमें संदेह नहीं है कि हर चीज की मांग और पूर्ति की परिस्थितियां अलग अलग होती हैं और इसलिए भारतीय उद्योग के विभिन्न क्षेत्रों में विद्यमान अनेक प्रकार की परिस्थितियों के लिए कोई एक समाधान कारगर नहीं हो सकता। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार ने कीमतों और वितरण के संबंध में अधिक से अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया है, जिससे उपभोक्ताओं और उत्पादनकर्ताओं के हितों के बीच उचित संतुलन बनाये रखा जा सके ।